‘नमक का दरोगा’

-विकास नारायण राय

कहानीकार प्रेमचंद ने यह कसर अपनी विचक्षणता से पूरी की। लीक से अलग उनके दरोगा के समान्तर किरदार ने शासन के जन-विरोधी चरित्र को ही बेतरह उजागर किया, दिखाया कि सरकारी अमले का व्यापक भ्रष्टाचार औपनिवेशिक लूट का एक सहज हथकंडा ही तो था!

अगला ‘नमक का दरोगा’ कौन बनेगा! नमक जैसे सुलभ पदार्थ को औपनिवेशिक लूट का जरिया बनाये जाने की पृष्ठभूमि में, 1919-20 में, अमर कथाकार प्रेमचंद की ‘नमक का दरोगा’ कहानी प्रकाशित हुयी, जो ब्रिटिश राज, व्यापारी वर्ग और नौकरशाही के भ्रष्ट गठजोड़ को नंगा करनेवाला वृत्तान्त है। कहानी में आज की क्रोनी कैपिटल की स्वाभाविक झलक भी है। अभी प्रेमचंद स्वयं भी सरकारी विभाग में कार्यरत थे और स्वाभाविक रहा होगा कि वे सरकारी कोप के डर से बच-बचाकर लिखें। लिहाजा, पहली नज़र में ‘नमक का दरोगा’ भ्रष्ट प्रशासनिक मशीनरी के एक अपवादस्वरूप ईमानदार कर्मचारी की मात्र प्रेरक कहानी नजर आती है। पर अपनी विचक्षणता से प्रेमचंद जनता के मतलब की यह अनकही सच्चाई भी कथानक में पिरोने में सफल हैं कि ऐसी ईमानदारी से शासन का जन-विरोधी चरित्र नहीं बदलता। अंतत: नमक के शातिर व्यापारी ने, जिसकी रिश्वत की पेशकश दरोगा ने ठुकराई थी, उसे अपना वेतनभोगी कारिन्दा ही बना लिया। क्रोनी कैपिटल का यह सफल खेल - कारपोरेट, राजनीति और नौकरशाही का खुला गठजोड़ - स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उत्तरोत्तर आगे से आगे परवान चढ़ता रहा है। ऐसे में क्या चुनाव बाद का नया दरोगा, राष्ट्रीय संसाधनों पर क्रोनी कैपिटल की जकड़बंदी को तोड़ने जा रहा है?

कहानी को, लगभग एक शताब्दी गुजर जाने के बाद भी, क्रोनी कैपिटल की आज की दुनिया में झांकने की खिड़की मानना असंगत न होगा। प्रेमचंद ने पूंजी और प्रशासन के याराने की समाज-विरोधी गठजोड़ की यह दास्तान ‘ईमानदारी बनाम सच्चाई’ की अंतर्वस्तु पर गढ़ी थी। ध्वनि यह कि ‘ईमानदारी’ शासक की जमीन हुयी और ‘सच्चाई’ जनता की। स्वतंत्र भारत को, शासन और पूंजी का भ्रष्ट याराना, अंग्रेजी राज से विरासत में मिला। तो भी, गत 3-4 वर्षों में लोकपाल आन्दोलन के तूल पकड़ने और अब भ्रष्टाचार के मसले पर ‘आप’ के एक जोशीली राजनीतिक पार्टी के स्वरूप में उभरने से, क्रोनी कैपिटलिज्म राष्ट्रीय चुनावों में उल्लेखनीय मुद्दा बन सका है। हालांकि इस विमर्श को सत्ता के दावेदारों द्वारा ‘ईमानदारी’ के दायरे में सीमित रखने से, ‘सच्चाई’ का जन-आयाम फिर भी पीछे ही रहा। मीडिया और न्यायपालिका की हलचल में भी सुशासन के आयामों को ‘ईमानदारी’ के मापदंड पर कसने की ही पहल दिखती है, उसे ‘सच्चाई’ की जन-कसौटी तक ले जाने की नहीं।

समकालीन राजनीति में ‘ईमानदारी’ और ‘सच्चाई’ के बीच का अंतर जानना हो तो एक नजर प्रधानमंत्री के रूप में मनमोहन सिंह पर डालना काफी होगा, ईमानदारी में शत-प्रतिशत और सच्चाई में जीरो। शायद ही कोई मानना चाहेगा कि मनमोहन सिंह ने आर्थिक घोटालों से भरे अपने कार्यकाल में स्वयं रिश्वत-भरी हिस्सेदारी की होगी; पर सभी जानते हैं कि संविधान के अनुसार काम करने की शपथ लेने के बावजूद वे एक रबर स्टैम्प बन कर ही रहे। यह व्यक्तित्व का विरोधाभास नहीं, शासन की तकनीक हुयी। लूट और शोषण की घोषित औपनिवेशिक व्यवस्था चलानेवाले अंग्रेजों ने भी अपने प्रशासन में ईमानदारी के महिमामंडन पर जोर बनाये रखा था, पर सच्चाई का दावा तो क्या कभी दिखावा भी नहीं किया। उन्होंने ‘आनेस्टी इज द बेस्ट पालिसी’ के माडल पर अपना प्रशासन चलाया। ‘ईमानदारी’ भी उनके शासन की नीति भर थी; मूल्य नहीं! सरकारी अमले को औपनिवेशिक शासकों के शोषक लक्ष्यों के प्रति ईमानदार रहना होता था, न कि जनता के व्यापक हितों के प्रति।

बेमतलब नहीं है कि अंग्रेजी भाषा में आनेस्टी (ईमानदारी) और इंटीग्रिटी (सच्चाई) दो अलग-अलग शब्द हैं। मेरे दिवंगत मित्र, साहित्यकार ओमप्रकाश वाल्मीकि विद्रूप से कहा करते थे कि हिन्दी भाषा में आनेस्टी का कोई पर्यायवाची शब्द नहीं है, ‘ईमानदारी’, फारसी से आया शब्द है। देखा जाय तो इस अर्थ में ‘बेईमानी’ का भी कोई पर्यायवाची शब्द हिन्दी में नहीं है। दरअसल भारत की तमाम भाषाओं में इन दोनों शब्दों के पर्यायवाची नदारद हैं। ऐसा इसलिए कि भारतीय समाजों में महत्व ‘सच्चाई’ से ध्वनित मूल्य का रहा है। ‘सच्चाई’ में नैतिकता की संपूर्ण सामाजिक अवधारणा समाहित रही। जो सच्चा वो अच्छा! लिहाजा अलग से ‘ईमानदारी’ की जरूरत नहीं रह जाती। तभी गांधी ने ‘सत्याग्रह’ को भारतीय जनता की लामबंदी का हथियार बनाया और सार रूप में दर्शन दिया - सत्य ही ईश्वर है!

चुनाव के दौर में विभिन्न राजनीतिक दलों की ओर से तरह-तरह के मुद्दे और मसले, मतदाता के बीच, अनुकूल ध्रुवीकरण के लिए उछाले जाते हैं। इस घमासान में एक समांतर ध्रुवीकरण जनता और शासकों के बीच भी शाश्वत नजर आएगा। यह, जनता की प्राथमिकताओं यानी ‘सच्चाई’ और शासकीय पहलों यानी ‘ईमानदारी’ के आयामों की टकराहट पर आधारित है। सत्ता की जंग में जुटे राजनीतिक दल एक दूसरे की ईमानदारी को चुनौती देते हैं और इस लिहाज से एक दूसरे से बेहतर दिखना चाहते हैं। दूसरी तरफ जनता उन्हें सच्चाई के पैमाने पर कसती है और सभी को एक जैसे पाले में खड़ा पाती है। जनता के नजरिये से, मनमोहन सिंह के दस साल के कार्यकाल में कांग्रेस सरकार के डी एन ए से नदारद होती ‘सच्चाई’ इसी समांतर ध्रुवीकरण की बानगी कही जायेगी। इसीलिये मोदी के गुजरात में लोकयुक्त का न होना आम मतदाता के लिए बड़ी खबर नहीं बनती, और, यहां तक कि, ईमानदारी के मोर्चे पर ‘आप’ का जन-लोकपाल भी आदमखोर शेरों के सामने एक चूहेदानी जैसा ही लगता है।

इस समांतर ध्रुवीकरण का सहज असर है कि भारत की क्रोनी कैपिटल लाबी, जिसने दस वर्षों तक उदार मनमोहन सिंह सरकार से घनिष्ठ सम्बन्ध रखा, नरेंद्र मोदी के संकीर्ण राजनीतिक नेतृत्व को लेकर भी समानरूप से आश्वस्त नजर आती है। मनमोहन की घोषित व्यक्तिगत ईमानदारी और मोदी के ईमानदार प्रशासन की दावेदारी, दोनों में कमो-बेश प्रेमचंद का अंग्रेजी शासन-काल का ‘नमक का दरोगा’ देखा जा सकता है। कहानी में दरोगा वंशीधर की खांटी की ईमानदारी, अंतत: प्रशासन-पूंजी के भ्रष्ट याराने का दूरगामी स्वार्थ ही सिद्ध करती है। रिश्वत के बड़े से बड़े प्रलोभन को ठुकरानेवाला यह दरोगा, जमींदार-व्यवसायी पंडित अलोपीदीन की नमक की तस्करी से कमाई जायदाद की देखभाल में भी ईमानदारी के उसी मिशनरी जज्बे के साथ बखूबी तत्पर हो जाता है। 2014 के चुनाव परिणामों को लेकर देश की क्रोनी कैपिटल की बेफिक्री के आलम का भी ऐसा ही समीकरण है। नमक के एक दरोगा, मनमोहन सिंह की पारी बेशक पूरी हो गयी हो; दूसरे दरोगा, नरेंद्र मोदी के शासन की बागडोर संभालने पर तो खुद अलोपीदीन ही वंशीधर की भूमिका में भी होगा।

कहानी ‘नमक का दरोगा’ में तत्कालीन पैमाने पर आज के क्रोनी याराने का समूचा माहौल दृष्टिगोचर है। जो स्थिति आज कोयला, लोहा, तेल, गैस, रेत जैसे खनिज पदार्थों को लेकर है, उस जमाने में नमक को लेकर रही होगी। समाज में ‘सच्चाई’ की आज जैसी वस्तुस्थिति - ‘जब नमक का नया विभाग बना और ईश्वर प्रदत्त वस्तु के व्यवहार करने का निषेध हो गया तो लोग चोरी छिपे इसका व्यवहार करने लगे। अनेक प्रकार के छल-प्रपंचों का सूत्रपात हुआ, कोई घूस से काम निकालता था, कोई चालाकी से। अधिकारियों की पौ बारह थी।’ सरकारी कामकाज में ‘ईमानदारी’ की भूमिका भी आज जैसी, ‘मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है, जो एक दिन दिखाई देता है और घटते-बढ़ते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है जिससे सदैव प्यास बुझती है।’ और, क्रोनी कैपिटल की पहुँच? नमक तस्करी का काफिला सरे-राह पकड़ा गया तो भी क्या, ‘पंडित अलोपीदीन का लक्ष्मी जी पर अखंड विश्वास था। वह कहा करते थे कि संसार का तो कहना ही क्या, स्वर्ग में भी लक्ष्मी का ही राज्य है। उनका यह कहना यथार्थ ही था। न्याय और नीति सब लक्ष्मी के ही खिलौने हैं, इन्हें वह जैसा चाहती हैं नचाती हैं।’

अब आया असल प्रसंग। तस्कर अलोपीदीन की अदालत में पेशी। मोइली-अम्बानी का क्रोनी नाच! ‘अदालत में पहुँचने की देर थी। पंडित अलोपीदीन इस अगाध वन के सिंह थे। अधिकारी वर्ग उनके भक्त, अमले उनके सेवक, वकील-मुख्तार उनके आज्ञापालक और अरदली, चपरासी तथा चौकीदार तो उनके बिना मोल के गुलाम थे। उन्हें देखते ही लोग चारों ओर से दौड़े। सभी विस्मित हो रहे थे। इसलिए नहीं कि अलोपीदीन ने क्यों यह कर्म किया, बल्कि इसलिए कि वह कानून के पंजे में कैसे आये!’ अलोपीदीन बाइज्जत बरी हुए और वंशीधर बाकायदा मुअत्तल। तस्कर ने मौका देखकर दरोगा को अपना मैनेजर बनाने का पांसा फेंका - ‘संसार में ऐसे कितने धर्मपरायण मनुष्य हैं जो धर्म पर अपना सब कुछ अर्पण कर सकें?’ आज के अलोपीदीनों को भी वंशीधरों की यारी सहज उपलब्ध है; राजनीतिकों और नौकरशाहों का कारपोरेट जेबों में होने में नया कुछ भी नहीं।

फिर भी, 2014 के चुनावी सन्दर्भ में कहानी का पुनर्पाठ तभी संगत कहा जाएगा जब यह शासक और जनता के बीच ध्रुवीकरण के दोनों सिरों, ‘ईमानदारी’ और ‘सच्चाई’, को रेखांकित करे। कांग्रेसी मनमोहन और भाजपाई मोदी जैसे क्रोनी-कैपिटल के विश्वासपात्रों से इतर, दरोगा की एक तीसरी छवि भी कहानी में है - ‘आप’ के अरविन्द केजरीवाल की! दरोगा ने तस्कर की गिरफ्तारी का हुक्म दे दिया और मोलभाव की नौबत आ गयी, ‘धर्म की इस बुद्धिहीन दृढ़ता और देव-दुर्लभ त्याग पर धन बहुत झुंझलाया। अब दोनों शक्तियों में संग्राम होने लगा। धन ने उछल-उछलकर आक्रमण करने शुरू किये। एक से पांच, पांच से दस, दस से पंद्रह और पंद्रह से बीस हजार तक नौबत पहुँची, किन्तु धर्म अलौकिक वीरता के साथ इस बहुसंख्यक सेना के सम्मुख अकेला पर्वत की भांति अटल, अविचलित खड़ा था।’

पर यह अभी भी ‘सच्चाई’ का नहीं, ‘ईमानदारी’ का ही सिरा हुआ। प्रेमचंद को इस पर भी, अलोपीदीन की गिरफ्तारी के प्रसंग में, ‘यथा राजा तथा प्रजा’ का आवरण चढ़ाना पड़ा, ‘जिसे देखिये वही पंडित जी के इस व्यवहार पर टीका-टिप्पणी कर रहा था, निंदा की बौछारें हो रही थीं, मानो संसार से अब पापी का पाप कट गया।’ अंग्रेजी राज का कारिन्दा प्रेमचंद ‘सच्चाई’ का सिरा एक सीमा तक ही पकड़ सकता था। कहानीकार प्रेमचंद ने यह कसर अपनी विचक्षणता से पूरी की। लीक से अलग उनके दरोगा के समान्तर किरदार ने शासन के जन-विरोधी चरित्र को ही बेतरह उजागर किया, दिखाया कि सरकारी अमले का व्यापक भ्रष्टाचार औपनिवेशिक लूट का एक सहज हथकंडा ही तो था! क्रोनी कैपिटल को नंगा करने की भूमिका में ‘आप’ का ‘नमक का दरोगा’ बनने का चुनावी दावा इन्हीं सीमाओं व सम्भावनाओं के परिदृश्य का हिस्सा है।

विनाशकारी व्यवस्था का विकास पुरुष

लोकसभा चुनाव सन्निकट है। कई जमूरे सामने हैं। इनमें से एक नरेन्द्र मोदी भी हैं। प्रधानमंत्री के दौर में शामिल यह व्यक्ति बहुत लम्बे समय से उछल-कूद मचा रहा है। बहुत वाह-वाही भी बटोर ली है। इस व्यक्ति ने अपने प्रचार में एक-दो नहीं बल्कि झूठ का पूरा पहाड़ खड़ा कर दिया है। अपने फ़ासीवादी चेहरे पर मानवीय रंग चढ़ा दिया है। गुजरात का उदाहरण देकर अपने आप को विकास पुरुष घोषित कर दिया है। गुजरात नरसंहार में 2000 से अधिक मुसलमानों के कत्लेआम और मानव विकास सूचकांक में गुजरात के निचले पायदान में खड़े होने के बावजूद नरेन्द्र मोदी मानवीय और विकास पुरुष हैं। क्या खूब नायक है यह?

नरेन्द्र मोदी की विकास पुरुष की छवि लम्बे समय से बनायी जा रही है। मुख्य मीडिया (कारपोरेट मीडिया) तो इस काम में रात-दिन एक किये हुए है। मोदी द्वारा फैलाये जा रहे झूठ को सच साबित करने में मीडिया की खास भूमिका है। मोदी के झूठ के बरक्स सच बात कहने वालों को तो मीडिया कोई जगह नहीं दे रहा है या बहुत कम जगह दे रहा है। गुजरात में पिछले लम्बे समय से ज़मीनों का भारी पैमाने पर अधिग्रहण किया जा रहा है। गुजरात सरकार औने-पौने दामों पर देशी-विदेशी पूंजीपतियों को ज़मीनें बाटं रही है। किसानों से जमीनें छीनकर स्पेशल इकोनोमिक जोन, हाईटेक टाउनशिप खड़े किये जा रहे हैं। इस प्रक्रिया को गुजराती किसान, आदिवासी विरोध कर रहे हैं। पर ये कहीं खबरों में नहीं हैं। खबरों में है तो बस मोदी और उसका विकास। मोदी के विकास रथ किनके जीवन को उज़ाड़ रहा है इसकी कहीं कोई चर्चा नहीं है।

नरेन्द्र मोदी की एक महत्वाकांक्षी योजना (सरदार पटेल को हाईजैक करने की) ‘एकता की मूर्ति’ स्थापित करने की है। यह एकता की मूर्ति नर्मदा के पास साधु टेकरी में प्रस्तावित है। एकता की मूर्ति के लिए बड़े पैमाने पर किसानों से ज़मीनें छीनी जानी हैं। जिसके विरोध में 70 गांवों के किसान व आदिवासी विरोध कर रहे हैं। किसानों व आदिवासियों को उनकी ज़मीन का मुआवजा मिलेगा, इस बात की उम्मीद उन्हें बेहद कम है क्योंकि अभी तक गुजरात सरकार नर्मदा बांध

मोदी को चमकाने के पीछे भी भारतीय पूंजीपति वर्ग ही है। मोदी ने भरोसा दिलाया है कि वह निजीकरण-उदारीकरण की नीतियों को तेज़ी से लागू करेगा। ज़मीनों, प्राकृतिक संसाधनों को बिना किसी जन-दबाव में आये पूंजीपतियों की झोलियों में डाल देगा। पूंजीपति मोदी के इन इरादों और कांग्रेस में दबाव बनाने के लिए मोदी को चमका रहे हैं।

निर्माण के दौरान विस्थापित 16 गांवों को मुआवजा तक नहीं दे पायी है। ये लोग भी जब-तब अपनी आवाज उठाते रहते हैं। गुजरात में बड़े पैमाने के स्पेशल इकोनोमिक जोन, हाईटैक टाउन शिप व इसी तरह की अन्य योजनाएं चल रही हैं। कुछ चालू हैं। कई प्रस्तावित हैं गुजरात में ऐसी ही 13 परियोजनाएं लक्ष्य में हैं। मंडल बेचराजी पट्टी में एसईजेड के लिए एक लाख छब्बीस हज़ार एकड़ ज़मीन का अधिग्रहण प्रस्तावित है। जिसमें 80 प्रतिशत बेहद उपजाऊ भूमि है और 15 प्रतिशत भूमि में चारागाह है। इस एसईजेड के तहत 44 गांव पूरी तरह से बर्बाद हो जाते हैं। इन परिवारों की संख्या 76 हज़ार के आस-पास है।

बेचराजी में ही हंसपुर गांव में 700 एकड़ भूमि मारुति के प्लांट हेतु दी गयी है। निरमा के सिमेंट फैक्टरी के लिये भावनगर में ज़मीन दी गयी। 777 हेक्टेअर ज़मीन अमेरिका की कम्पनी न्यूक्लियर पावर प्रोजेक्ट के लिए मीठी विर्दी में दी गयी है। इन विशेष आर्थिक क्षेत्र के आस-पास बड़ी रिहायशी कॉलोनियां भी प्रस्तावित हैं।

किसानों-आदिवासियों को उज़ाड़कर विकास का यह मॉडल कारपोरेट घरानों का है। जिसे मोदी गुजरात में तेज रफ़्तार से बढ़ा रहे हैं। इसलिए मोदी कारपोरेट घरानों के चहेते बन गये हैं। कारपोरेट मीडिया में छाये हुए हैं। मोदी विरोधी बातें मीडिया में कमोवेश गायब हैं। गुजरात ही नहीं पूरे भारत में यही हो रहा है। पूंजीपति का विकास देश का विकासमान लिया जा रहा है। शेयर बाज़ार के उछाल को झोंपड़ी में भी खुशहाली का पैमाना सिद्ध किया जा रहा है। भाजपा-कांग्रेस व अन्य सभी पूंजीवादी पार्टियां पूंजीपति की सेवा में रात-दिन एक किये हुए हैं।

मोदी को चमकाने के पीछे भी भारतीय पूंजीपति वर्ग ही है। मोदी ने भरोसा दिलाया है कि वह निजीकरण-उदारीकरण की नीतियों को तेज़ी से लागू करेगा। ज़मीनों, प्राकृतिक संसाधनों को बिना किसी जन-दबाव में आये पूंजीपतियों की झोलियों में डाल देगा। पूंजीपति मोदी के इन इरादों और कांग्रेस में दबाव बनाने के लिए मोदी को चमका रहे हैं। विश्व आर्थिक संकट के दौर में पूंजीवादी दानव की भूख बहुत अधिक बढ़ गयी है। इसकी भूख दानवी किस्म के तरीकों से पूरी की जा सकती है। उसके लिए कांग्रेस नहीं तो भाजपा, भाजपा नहीं तो आम आदमी पार्टी किसी को भी पूंजीपति वर्ग आगे कर सकता है। जो पार्टी पूंजीवादी राक्षस की भूख शांत करने के जोर-शोर से प्रयास करेगी वहीं इस वर्ग की आदर्श पार्टी होगी। उसके हाथ में सत्ता की चाबी होगी।

-नागरिक